लिपि प्रकाशन
1, अंसारी रोड, नई दिल्ली-110 002

शब्द दंश

मूल्य : रु० 24.00

© मुद्राराक्षस

प्रथम संस्करण : 1984

प्रकाशक
लिपि प्रकाशन
1, अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110 002

मुद्रक : ग्रन्थशिल्पी द्वारा नागरी प्रिंटर्स, दिल्ली-32

SHABDA DANSH (Short Stories) By Mudrarakshas

शब्द-दंश

चलाने लगे। जैसे नींद में कोई चलता है, इस तरह सम्मोहित सा आकर वह अफसर के पास खड़ा हो गया। अफसर ने झटके से अपनी पिस्तौल उसकी ओर उठायी।

सुखबीर ने हाथ जोड़ दिये—जनाब देखिए, मैं तो नहीं भागा और फिर मैं इन लोगों में था भी नहीं। जनाब—मैं···

उसे लगा जैसे वह किसी भारी ट्रक से टकरा गया हो। गोली चलने की आवाज उसने नहीं सुनी। सिर्फ बारूद की एक लपट अंधेरे में दीखी, या शायद उसके दिमाग में। उसके बाद सब कुछ ढीला होता गया जैसे वह रेत की बोरी हो और रेत तेजी से निकल कर छितराती जा रही हो।

दांत या नाखून या पत्थर

□

अब वहां सिर्फ मटमैली धूप थी और गर्द। गर्द के बीच कुछ पुरानी चप्पलें, उलटी-सीधी और काले झंडों के चीथड़े थे। हवा के साथ दफ्ती पर लिखा हुआ एक नारा एक सिरे से उभर कर फिर गर्द में लेट जाता था, जैसे कोई जरूमी आदमी खुद-ब-खुद होश में आ रहा हो।

सिपाहियों को बहुत ज्यादा दौड़ना पड़ता था। मैदान चूंकि काफी बड़ा था और लड़के बहुत तेजी से दौड़ लगा लेते थे, इसलिए सिपाहियों के चेहरों पर पसीने और मिट्टी की चिपचिपी परत जम गयी थी। उनके मोटे-मोटे जूते गर्द की वजह से ऊंटों के खुर जैसे दिखने लगे थे।

पुलिस-अफसर ने बेहद सन्तोष के साथ मुख्यमन्त्री जी की ओर देखा। लेकिन अगले क्षण उसका सन्तोष संकुचित हो गया। मुख्यमन्त्री का चेहरा जल रहा था। उनकी कनपटियों को जैसे किसी ने दाग दिया हो। लोगों की भगदड़, पत्थरबाजी और लाठीचार्ज के दौरान इतनी धूल उड़ी थी कि मुख्यमन्त्री को छींकें आने लगी थीं, उनकी इच्छा हुई थी कि वह नाक पर रूमाल लगा लें, लेकिन वह जिद पर आ गये। लोगों ने उन्हें घेर कर किसी दूसरी जगह ले जाना चाहा लेकिन उन्होंने इनकार कर दिया। उन्हें यह सब बेहद अपमानजनक लग रहा था। पचीस बरस पहले की बात दूसरी थी। अंग्रेज होता था गवर्नर या कमिश्नर। उसे तो बुरा लगना ही था। मुख्यमन्त्री तो अंग्रेज नहीं थे। फिर उनके खिलाफ इस तरह का जुलूस !

उन्होंने वहां से हटने से इनकार कर दिया था। वह कायर नहीं थे। कमजोर भी नहीं थे। लड़के इतना शोर न मचाते तो वह काले झण्डों की भी उपेक्षा करने को तैयार थे। और फिर उनके इतने आगे तक घुस आने

का कोई मकसद भी नहीं था। इसके ऊपर पत्थरबाजी !

उनकी पहली अवसन्नता छंटी तो गुस्से ने एक और मोड़ ले लिया। लड़के ही क्यों, वह बुड्ढा भी तो था ! बकरी का दूध पीकर और नीम की चटनी खाकर साला जवान ही होता जाता है—इसकी···

अचकचा कर उन्होंने अपनी जबान रोक ली। उनके अंग-रक्षकों के अलावा सचिव, पुलिस के बड़े अफसर और सेठ सरजूदास भी वहीं थे। गाली अनजाने ही जोर से निकल गयी थी।

उनका मन बेहद खराब हो गया। अभी वहां सारी ही कार्रवाई बाकी थी, लेकिन उनका दिमाग स्थिर नहीं हो पा रहा था। कैसे यज्ञ पूरा हुआ और कैसे उन्होंने शिलान्यास किया, उन्हें पता नहीं चला। लौटते वक्त रास्ते में उनके सचिव ने धीरे से कहा—सर, अगर हम बुड्ढे को गिरफ्तार करवा लें ?

—गिरफ्तार ? तुम्हारा दिमाग चल गया है। उसे हीरो बनाना चाहते हो ? मुख्यमन्त्री ने उसे डांटा। दो साल पहले तक की बात दूसरी थी। तब जरूर गलती हुई थी मुख्यमन्त्री से। उसी वक्त उन्हें सावधान हो जाना चाहिए था।

दरअसल सावधान और भी पहले से हो जाना चाहिए था। बुड्ढा शुरू से ही गड़बड़ था। हिन्दुस्तान की आजादी के दिन कितना बड़ा ढोंग इसने किया था ! किसी तरह की खुशी नहीं, उत्साह नहीं। कहता था वह पीड़ितों के लिए दुखी है, उसके दुख का कारण कुछ दूसरा था—मुख्यमन्त्री सचिव को इतिहास समझाने लगे : न वह मन्त्री बना, न गवर्नर, कहता था, उसे कुछ नहीं चाहिए। मन के अन्दर था, लोग जबरन सब कुछ दे जायें, लोगों ने नहीं दिया, बुड्ढा कुढ़ता रहा। फिर झक्की हो गया—मन्त्री लोग झोंपड़ी में क्यों नहीं रहते ? पैदल क्यों नहीं चलते ? अभी साली वो कॉनफ्रेंस हो रही है, इंटर-नेशनल कॉनफ्रेंस ऑफ इकॉलॉजी—साले डेलिगेट्स को झोंपड़ी में रखो, पत्तल में खिलाओ और जंगल में टट्टी फिराओ···

सचिव 'हो-हो' करके हंसा, फिर अवसर की गंभीरता के कारण तुरंत ही संयत हो गया।

मुख्यमन्त्री को यकीन हो गया कि स्थिति अब बिगड़ने लगी है, वाइसचांसलर का घेराव, सचिवों के खिलाफ जुलूस, मन्त्रियों के घर भूख-हड़तालें—जब तक यह क्रम मुख्यमन्त्री को छोड़कर चलता रहा, तब तक तो अकसर मुख्यमन्त्री को सुविधा ही होती रही थी। उपकुलपति को हटाना हो या डिप्टी कमिश्नर का तबादला करना हो, ऐसे जुलूस और धरने मुख्यमन्त्री के काम आ जाते थे। लेकिन यह स्वयं उनके विरुद्ध जुलूस और प्रदर्शन ? गलती दो बरस पहले ही हो गयी।

बाजार में अचानक गांधी की किताबों का बिकना बंद हो गया था। बहुत जरूरी भी नहीं था। ऐसे महत्व की वे थीं भी नहीं। लेकिन इसके बाद अचानक एक दिन किसी ने मुख्यमन्त्री को खबर दी कि गांधी खुद एक सड़ा-सा हारमोनियम लेकर बड़ी सड़क पर गाना गा-गा कर अपनी किताबें बेच रहे थे। गाने की पंक्तियां भी उन्हें सुनायी गयी थीं :

वो माखन-चोर कहाते थे
मैं नमक-चोर कहलाता था···

मुख्यमन्त्री को बेहद हंसी आयी थी। पेट पर हाथ रख कर वह हंसे थे और फिर खादी के रूमाल से आंखें पोंछने लगे थे—साला है खुंदकी ! बुड्ढे का जवाब नहीं !

सच बात है, बुड्ढा अजीब ही था। मुख्यमन्त्री ने उसकी एक बड़ी मूरत लगवायी थी एक बार। कहते हैं आधा करोड़ रुपया खर्च हो गया था उसमें। बुड्ढा जाने कब वहां गया। पहले तो उसने उस मूरत को गिराने की कोशिश की। मगर वह तांबे की बनी थी। काफी वजनी थी। बुड्ढे ने एक पत्थर लेकर उसकी नाक और आंखें पिचकायीं और गुस्से में उसके ऊपर पेशाब करके आ गया। सुबह उस पर एक परचा चिपका हुआ लोगों ने देखा, लिखा था—हे राम, ये लोग आदमी को तब तक नहीं पहचानते, जब तक वह देवता न हो जाये। कोई देवता न होना चाहे तो उसे जबरदस्ती बनाते हैं। बड़ा बनने और बनाने का रिवाज कब टूटेगा ? मेरे हरिजन भाई की मूरत यहां क्यों नहीं लगी ? इतने पैसे लगा दिए, अरे, मेरे गरीब देश को दे देते ये पैसे !

नीचे दस्तखत था—मोहनदास कर्मचन्द गांधी।

लोगों को बहुत अच्छा नहीं लगा। परसराम लिमिटेड के मालिक ने दस लाख रुपया दिया था मूरत के लिए। उसने अपने अखबार में इस बात पर आक्रोश प्रकट किया कि ऐसे कीमती स्मारकों को अपवित्र होने से सरकार बचा नहीं सकती।

इसके बाद स्थिति और बुरी हो गयी। दुनिया से गरीबी दूर करने की समस्या पर विचार करने के लिए एक बहुत बड़ा सम्मेलन राजधानी में आयोजित हुआ था। दुनिया के बड़े-बड़े देशों से ऊंची-ऊंची हस्तियां आ रही थीं, जिनके लिए खूबसूरत इलाके में शानदार इमारतें बनायी गयी थीं। इन इमारतों में बड़े लोगों की बड़ी-बड़ी सुविधाएं रातों-रात तैयार की गयी थीं। और यहीं बुड्ढे ने गड़बड़ी खड़ी कर दी।

इमारतों के पाखानों की सफाई के लिए भंगियों की फौज में बुड्ढा भी आ खड़ा हुआ था। आजादी की लड़ाई के दिनों जो पत्रकार महीनों गांधी के साथ रहा था, उसने एक सुबह देखा, उसके फ्लैट के पाखाने की सफाई वही जाना-पहचाना बुड्ढा कर रहा था। वह फ्रांसीसी पत्रकार अंग्रेजी कम जानता था। फ्रांसीसी में लगभग चीखता हुआ फ्लैट से बाहर भागा, थोड़ी देर में वहां विदेशी-देशी प्रतिनिधियों की भीड़ लग गयी। बुड्ढा किसी से कुछ नहीं बोला। बुड्ढा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर छपी तसवीरों से काफी अलग था। हजामत शायद कई रोज से नहीं हुई थी। सर्दी के मौसम में भी उसने सिर्फ एक अंगोछा कमर पर लपेट रखा था। बदन पर बेहद मैला, फटा हुआ, तंग कुरता था। उसके बदन की खाल जगह-जगह से चटख-सी गयी थी। दरवाजे के पास उमड़ी हुई भीड़ के चेहरे पर किसी कदर आतंक भरा कुतूहल था। धैर्य के साथ अपना काम खत्म करने के बाद फिनायल का डिब्बा, पोंचा और झाड़ू उठा ली। दरवाजे के करीब वह आया तो सहसा भीड बीचों-बीच से फट गयी। बड्ढा बाहर आया, फिर ठिठक गया। कमर में उसने कुछ परचे उड़स रखे थे। शायद वह इसके लिए तैयार था। उसने परचों को सावधानी से खोला और उनमें से कुछ परचे उसने लापरवाही से फर्श पर फेंक दिए और भीगे पाव घसीटता हुआ सीढ़ियों की ओर चल दिया। गनीमत थी कि परचे लोगों के हाथों सही-सलामत ही आ गए। परचों पर विशेष कुछ नहीं था, सिर्फ लिखा था

—हमारी गरीबी का मजाक मत उड़ाओ, महलों में गरीबी पर बहस होने भर से आदमी का दुख कम नहीं होगा, बढ़ेगा। यहां से चले जाओ, हमें हमारे हाल पर छोड़ दो ! —गांधी।

मुख्यमन्त्री को बेहद तकलीफ हुई थी। बुड्ढे ने वहां भंगियों के साथ सफाई करना नहीं छोड़ा। बहुत कोशिश के बावजूद उसने बात किसी से नहीं की। एक बार ऐसा लगा कि शायद सम्मेलन स्थगित हो जाए, लेकिन अखबारों में एक चटपटी खबर के बाद काम ज्यों-का-त्यों चलता रहा था।

लेकिन धीरे-धीरे ऐसा लगने लगा जैसे बुड्ढा अपनी पराजय के साथ साथ और अधिक सक्रिय होता जा रहा है। सक्रिय या चिड़चिड़ा। चुनाव-अभियान शुरू करने से पहले मुख्यमन्त्री ने उससे आशीर्वाद चाहा तो उसने थूक दिया था। मैला, गिलगिला थूक जाने कब से बुड्ढे के मुंह में भरा था। काफी देर तक मुख्यमन्त्री की हिम्मत नहीं हुई कि बांह पर चिपक गये थूक के उस लोथड़े को पोंछ दें। बुड्ढा इतने भर से ही संतुष्ट नहीं हुआ था। उसने परचा छपा दिया था।

इसके बाद लोगों ने महसूस किया कि अब समय आ गया है, जब बुड्ढे को नियंत्रित किया जाये। बुड्ढे की जबान खुलती ही जा रही थी। वह चुनाव को ढोंग बताने लगा था। महंगाई बढ़ गयी थी, भला दस-बीस लाख रुपया चुनाव में लग जाना क्या बड़ी बात हुई ! मगर बुड्ढे को समझाए कौन ! वह कह रहा था, देश छोटे और बड़े में बंट गया है। शासन सिर्फ बड़ा ही करेगा। छोटे को मारना होगा और नहीं तो···नहीं तो···

इसी के बाद की घटना पर मुख्यमन्त्री पेट पर हाथ रख कर हंसे थे। खादी के रूमाल से आंखें पोंछते हुए उन्होंने कहा था—बुड्डा है खुंदकी !

सरकार की ओर से घोषणा की गयी थी कि देश में ऐसी विदेशी शक्तियां अपना जाल फैला रही हैं जिनसे देश की आजादी को खतरा है और ऐसा साहित्य बड़ी तादात में सस्ते दामों में देश में बेचा जा रहा है जिसमें देश की नीतियों के खिलाफ बगावत और बदअमनी फैलाने की

कोशिश की जा रही है। घोषणा के तुरन्त बाद बाजार से बुड्ढे की छोटी-छोटी किताबें गायब हो गयीं।

बुड्ढे के चेहरे पर तिलमिलाहट छिपकली की टूटी हुई दुम की तरह छटपटाने लगी। तब पहली बार बुड्ढा एक घिसा हुआ हारमोनियम लेकर सड़क पर आ बैठा था। उसकी बगल में उसकी लिखी हुई किताबों का एक बंडल था और साथ में दो मैले-से हरिजन लड़के, आस्तीन से नाक पोंछते हुए।

थोड़ी देर में वहां जाने कितने मैले-कुचैले लोगों की भीड़ आ बैठी थी। जाने कहां से आ निकले थे वे लोग। पूरी शाम बुड्ढा भजन और गाने गाता रहा। इसके बाद वहां अचानक शोर उठ खड़ा हुआ। बुड्ढे से थोड़ी दूर मूंगफलियां बेचती हुई बूढ़ी औरत अपनी गठरी उठा कर भागी, लेकिन शायद उससे देर हो गयी।

—बाबा भागो ! कमेटी! भीड़ में से किसी ने बुड्ढे से कहा। एक क्षण के लिए अस्थिर होकर बुड्ढा दुबारा सहज हो गया। लेकिन उसकी उंगलियां हारमोनियम की घिसी हुई गोटियों पर जम कर रह गयी थीं। गाना रोक कर वह उस मूंगफली वाली बुढ़िया को देख रहा था। बुढ़िया को भागने में देर हो गयी थी। म्युनिसिपल कमेटी की गाड़ी से कूद कर कुछ वर्दीधारी आदमियों ने उसकी पोटली पकड़ ली थी। मूंगफली गरम रखने के लिए लकड़ी के सुलगते हुए बुरादे भरी, कालिख लगी मिट्टी की हांडी लुढ़क कर धुआं छोड़ रही थी। बुढ़िया पोटली पर कांटे की तरह चिपक गयी थी और पोटली के साथ ही साथ कमेटी के ट्रक की ओर घिसटती जा रही थी।

सारे बाजार में भगदड़ मच गयी थी। छोटे खोमचे वाले, नेकटाइयां बेचने वाले, बटन-कंघियों की पेटी वाला, फूल के गजरों वाला, हर कोई बेपनाह भाग रहा था। कई टोकरे उलट जाने की वजह से चने या फलों की चाट फुटपाथ पर फैल गयी थी। कमेटी के सिपाही लोगों को खदेड़-खदेड़ कर सामान सहित ट्रक में ठूंस रहे थे।

ट्रक के करीब जाकर बुढ़िया ने पोटली छोड़ दी और रोने की बजाय भद्दी-भद्दी गालियां बकने लगी।

बुड्ढा शायद सोच रहा था कि उसके साथ भी यही होगा, लेकिन वह सही-सही इस बात का निश्चय नहीं कर पाया था कि स्थिति का सामना वह किस ढंग से करेगा। पिछले पचीस बरसों के राजनीतिक उतार में वह जैसे उस भाषा को भूलता गया था, जिस भाषा को लेकर उसने एक बार समूची दुनिया को हिलाया था। बल्कि भूला भी नहीं था, बस उसके निकट वह मुहावरा धीरे-धीरे असंगत होता गया था। उसकी हैसियत भी उसी तरह सिमटती गयी थी। तंत्र अब उसके साथ नहीं था। उसके भाषण के लिए अब दमकता हुआ मंच तैयार करने कोई नहीं आता था। अब वह नितांत निरीह हो चला था, अकेला और निहत्था।

—बाबा भागो ! किसी ने आवाज दी, लेकिन ठीक उसी वक्त चीलों की तरह झपट कर पीछे से दो आदमी आये और उन्होंने किताबों के बंडल के साथ हारमोनियम भी घसीट लिया। हारमोनियम का एक कोना बुड्ढे के कंधे से टकराया। पता नहीं दर्द से या धक्के से, बुड्ढा उलट गया। बुड्ढे के आसपास बैठे लोग सन्नाटे में आ गये और इसके बाद सहसा जैसे उस समूचे बाजार में एक मनहूस सनसनी फैल गयी।

पिछले कुछ बरसों में जहां तंत्र उसके प्रति उदासीन हो गया था, वहां लोग भी असंपृक्त हो चले थे। पहले बुड्ढे को मैले कपड़ों में देख कर लोगों को अफसोस हुआ था, बाद में वह आम बात हो गयी थी। बुड्ढे की बात सही लगती थी, लेकिन इससे आगे लोगों का रास्ता फिर उसी दुनिया की ओर मुड़ जाता था जिसकी प्राचीर के इस पार बुड्ढा सुबह से शाम तक चीखता था और थक कर किसी गली में खो जाता था। इस उदासीनता के बावजूद लोगों के मन का एक हिस्सा कहीं-न-कहीं बुड्ढे के साथ जीता था।

बंद हो चुके बैंक के चबूतरे पर खड़े दोनों बन्दूकधारी नीचे उतर आये। जैसे किसी सम्मोहन ने उन्हें खींचा हो। फुटपाथ की हलचल थम गयी।

—बाबा को मार दिया और हरामी खड़े देख रहे हैं! सहसा बुढ़िया ने ऊंची आवाज में कहा। वह आवाज लोगों के कद से एक हाथ ऊंची झंडी

की तरह उभरी और समूचे फुटपाथ की अवसन्नता पर यकायक हावी हो गयी। इससे अधिक बुढ़िया का लगाव वहां नहीं था। पलट कर उसने फुटपाथ पर बिखरे खोमचे का अमरूद उठाया और धोती से पोंछने लगी। बस इसी बीच वह सब हो गया। बुड्ढे के पास बैठे दो लड़के झपटे और कमेटी वालों के संभलते-न-संभलते उन्होंने हारमोनियम उनसे छीन लिया। वहां काफी हंगामा हो गया। कमेटी वाले इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि लोग इस तरह हिंसक भी हो उठेंगे। भीड़ के आक्रामक रूप को देख कर वे लोग सहम गये। जैसे-तैसे वे ट्रक में सवार हुए और निकल गए। कोई घंटे भर बाद वहां पुलिस की एक छोटी गाड़ी आयी। उस वक्त तक सब कुछ सहज हो चुका था।

वहां सहज हो गया, लेकिन लोगों को जैसे एक इशारा मिल गया था। अगले कुछ रोज में जहां कहीं भी कमेटी वाले गए, लोगों ने बाबा का नाम लिया और हल्ला बोल दिया।

यहीं गलती हो गयी थी, मुख्यमन्त्री ने सोचा। इलाज उसी वक्त किया जाना चाहिए था। बाईस-तेईस बरस अपनी बीती हुई भाषा को गीली हुई माचिस की तीलियों की तरह निरर्थक घिसते रहने के बाद उस दिन हारमोनियम छिनने के साथ अचानक वह नयी भाषा पा गया था।

निहत्था आदमी जंगली जानवरों में घिर जाए तो क्या वह रामभजन करके बच जाएगा? ऐसे घिर जाओ तो क्या करोगे? अरे नाखून तो हैं! दांत तो हैं! जमीन पर पत्थर तो हैं! निहत्थे आदमी की लड़ाई ऐसे ही तो होगी—अजीब तर्क थे बुड्ढे के। लेकिन इन तर्कों में पकड़ थी। किराने के मजदूर, दफ्तर के बाबू, झोंपड़ियों की औरतें, जिन्हें जहां कहीं अपने नाखूनों का या जमीन पर पड़े पत्थर का एहसास हुआ, उन्होंने इस्तेमाल शुरू कर दिया था।

मुख्यमन्त्री ने गलती की थी, फिर भी उन्होंने जो कुछ किया था, वह कम चालाकी भरा नहीं था।

किराने के व्यापारियों का दल मुख्यमन्त्री की सहायता मांगने आया था। बुड्ढे की हिंसा ने उनकी जिन्दगी मुश्किल कर दी थी। मुख्यमन्त्री मुसकराये, फिर उनका चेहरा सख्त हो गया। यही व्यापारी थे, जिन्होंने

पिछले चुनावों में उनके खिलाफ अपना आदमी खड़ा किया था।

—हिंसा तो होगी ही, मुख्यमन्त्री ने कहा और अखबार उलटने लगे। लोग उनके इस वाक्य से सकते में आ गये।

थोड़ी देर रुक कर मुख्यमन्त्री ने फिर कहा—आप लोगों का रवैया बदलेगा नहीं तो यही होगा। समय बदल रहा है। आप लोग समाज की प्रगति में रोड़े अटकायेंगे तो यही सब होगा। या तो आप लोग हमारे रास्ते पर चल कर शांतिपूर्ण ढंग से परिवर्तन होने दीजिए, नहीं तो लोग खून बहा कर परिवर्तन लायेंगे।

किराने वालों की समझ में न आने लायक अब कुछ नहीं बचा था। आदेश साफ था—मुख्यमंत्री के आदमी बनो वरना·····

इसके बाद स्वयं मुख्यमंत्री ने भी इस हथियार को अपनी कमर में लटका लिया। देखते-देखते जाने कहां से एक दल ऐसा तैयार हो गया जो कभी भी मौका पड़ने पर मुख्यमंत्री की इच्छा से पत्थर फेंक सके।

लेकिन बुड्ढा इस बार छटपटाया नहीं। छितराये हुए सख्त बालों से घिरे चेहरे पर एक मुसकराहट आयी। मुख्यमंत्री कितने आगे तक जा सकते हैं, यह बुड्ढे को पता था। इतनी समझ उसमें थी कि वह मुख्यमंत्री के कदम से कब अपनी दौड़ की शुरुआत करे।

विधान सभा की नयी इमारत मुख्यमंत्री की सबसे बड़ी हसरत थी। इस इमारत में ऐसे सभाकक्षों की योजना थी, जिनमें कई-कई हजार लोग एक साथ बैठ सकें और बड़ी-से-बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय सभाएं हो सकें। उसमें एक साथ बहुत-सी भाषाओं में साथ-साथ अनुवाद की आधुनिक सुविधाएं होनी थीं। जिस दिन शिलान्यास होना था, उस दिन के लिए उन्होंने खास-तौर से अपना भाषण तैयार किया था।

यहां वह बुड्ढा खुद आ पहुंचा। किस कदर डरावना हो चुका था वह इस बीच! मुख्यमंत्री देर तक उसे पहचान नहीं पाये। उसका कद कुछ और छोटा हो गया था। चमड़ी काली और पपड़ीदार हो गयी थी। चेहरे पर दाढ़ी तो नहीं थी, हां, आड़ी-तिरछी, छोटी-छोटी तीलियों जैसे

बेतरतीब बाल बेतरह उग आये थे। घुटनों तक उसने एक फटा हुआ, मैला सुथना पहन रखा था और उसके ऊपर पीली बनियान, जिस पर पसीने के दाग उभरे हुए थे; पैरों पर जाने कब की गर्द चढ़ी हुई थी।

मुख्यमंत्री एक क्षण के लिए विश्वास नहीं कर सके कि यह वही आदमी है, जिसके आसपास कभी लोग गंदगी जबान से चाट कर साफ करने को आतुर रहते थे। जो धुले, सफेद खादी के कपड़ों में स्वयं अपना साम्राज्य हुआ करता था। मुख्यमंत्री के मन में एक पल के लिए यह खयाल आया कि वह आगे बढ़ कर उस मैले बुड्ढे को गले लगा लें, उसे अपने बंगले पर ले जायें और नहला-धुला कर उसे दुबारा वैसा ही शुभ्र-धवल-संभ्रांत बना दें। संभ्रम की वह एक हल्की-सी किरण अभी उनके जेहन में उभरी ही थी कि बुड्ढे ने अपने पीछे उमड़ती भीड़ से हाथ उठा कर कुछ कहा।

मुख्यमंत्री का ध्यान दुबारा बंट गया। बुड्ढे के पीछे एक विशाल भीड़ थी। मुख्यमंत्री ने अपने जीवन में बहुत-सी भीड़ें देखी थीं। आजादी की लड़ाई के दिनों में कितने ही जुलूस उन्होंने निकाले थे। लेकिन वे भीड़ें कुछ दूसरी ही तरह की होती थीं। अक्सर लोग साफ-सुथरे कपड़े पहने होते थे। फूलमालाएं भी होती थीं। सफेद-चिकने कपड़े पर बड़े-बड़े सुंदर अक्षरों में नारे लिखे होते थे। इसके अलावा भीड़ें देखी थीं, अपने दौरे के दिनों में। अकाल या बाढ़ या सूखाग्रस्त इलाकों में भी जब वह दौरे पर निकलते थे, तो अकसर उनके करीब जो जनता लायी जाती थी, उसे एक-एक नया कुर्ता-पायजामा दे दिया जाता था। यह भीड़ अजीब ही थी। जैसे बहुत-से कॉक्रोच निकल आये हों। उनकी आंखें सुर्ख और चमकदार थीं और बाकी सब मैल और गर्द में लिथड़ा हुआ। जैसे वे कीच में रहने वाले ढोर हों। उनकी आंखों में डरावनी चमक थी। हाथों में बदरंग कागज को दफ्ती पर चिपका कर टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखे गये पोस्टर थे, और चिथड़ों को काले रंग में डुबो कर रंगे काले झंडे। लोगों की टांगें और हाथ बेतरह पतले और सूखे हुए थे, लेकिन झंडों और पोस्टरों के डंडों को उन्होंने इस तरह मुट्ठी में कस रखा था, गोया उंगलियां उन्हें चटखा देंगी। वहां बेहद शोर और गर्द फैल गयी।

ये लोग कह क्या रहे हैं? मुख्यमंत्री ने किसी तरह अपने आपको

संयत करके पूछा।

सचिव ने तुरंत उन्हें बता दिया। मुख्यमंत्री ने अपनी नजरें उधर से हटा लीं। उनके बायीं ओर सजे हुए मंच के नीचे एक छोटे-से चबूतरे पर एक संगमरमर की शिला लटकायी हुई थी और बेहतरीन मखमल के मेज-पोश से ढंकी मेज के ऊपर चांदी के तसले में थोड़ी-सी घुली हुई बालू-सीमेंट और एक नाजुक-सी सुनहली कन्नी रखी हुई थी। भीड़ से वह किसी कदर डर गये थे, इसलिए उधर से अपना ध्यान हटा लेना चाहते थे। पास खड़े किसी आदमी से उन्होंने पूछा—पहले भूमिपूजन होगा?

उस आदमी के जवाब से पहले एक पत्थर आया। पत्थर ठीक उस चांदी के तसले के बीचों-बीच गिरा। घुली हुई बालू-सीमेंट छपाके से उछली और मुख्यमंत्री की अचकन पर चिपक गयी। इसके बाद लगातार पत्थर आने लगे। लोगों ने मुख्यमंत्री को मंच की आड़ में खींच लिया।

पुलिस ने अंधाधुंध आंसूगैस के गोले फेंकना शुरू कर दिया था। जमीन पर गिरे गोलों से फुसकार के साथ सफेद कड़वा धुआं इस तरह निकलने लगता था, गोया उनमें से जिन निकलने वाला हो। लड़कों ने गोलों पर गर्द डालना शुरू कर दिया, लेकिन तभी लाठियां घुमाते हुए पुलिस वाले उन पर टूट पड़े। भागते-भागते लड़कों को जोश आ गया। उन्होंने लाठियों पर से झंडे नोच कर फेंक दिये और लाठियां घुमाने लगे।

बुड्ढे ने जाने से इनकार कर दिया, फैल गया। लेकिन लड़के उसे यों छोड़ने वाले नहीं थे। अगल-बगल से मिल कर उन्होंने बुड्ढे को टांग लिया और भाग चले। बुड्ढा ज्यादा भारी नहीं था। अगर उसके दांत होते तो वह जरूर उन्हें काट लेता। नाखून जरूर उसने चलाये लेकिन लड़कों ने परवाह नहीं की।

पुल पार करने के बाद घनी बस्ती में आकर भी वे रुके नहीं। पहली ही गली में मुड़ लिये ताकि उन पर ज्यादा लोगों की नजर न पड़े। गलियां अपरिचित नहीं थीं। कई चक्कर काटने के बाद वे एक मकान के अंदर घुस गये। वह मकान कम, गोदाम ज्यादा लगता था और उसके बाहर गली में दूर-दूर तक तांगे वालों के घोड़े और बूढ़ी गायें बंधी हुई थीं।

बुड्ढा इतना क्रुद्ध था कि उससे बोला नहीं जा रहा था। उसके होठों की दोनों कोरों पर फेन जम गया था।

ऐसे कुत्ते की तरह पकड़े जाने से अच्छा था, वहीं मर जाता।—अरे! तुमने इतना कायर समझा है मुझे ? बुड्ढा चीखता रहा। लड़कों ने ध्यान नहीं दिया। बाहर का दरवाजा बंद कर दिया। इसी वक्त पीछे के दरवाजे से दो आदमी सिर्फ लुंगियां बांधे हुए अंदर आये।

—बाबू, लड़ाई शुरू हो गयी है, आने वालों में से एक लंबे आदमी को संबोधित करके लड़कों ने कहा, वहां गोली चला दी। बहुत लोग मारे गये हैं। अब की पुलिस चुप नहीं बैठेगी। बाबा को पा गये तो बोटियां नोंच लेंगे·····

—बोटियां नोंच लेंगे? लंबा आदमी ठिठक गया। उसने बुड्ढे की ओर देखा। सहसा वे चौंक गये। बुड्ढा इस बीच जाने कब कमरे के अंदर गया और बाहर आया। उसके हाथों में एक चमकीला, भारी रिवॉल्वर था और वह झुर्रियोंदार पेट के पास उसे सटा कर उसमें कांपती उंगलियों से गोलियां भरने की कोशिश कर रहा था।

चूहे

उस एक चूहे को पहचानने में वह कतई भूल नहीं कर सकता था। अगर हमेशा ही उसे देख कर मूले को बेतरह गुस्सा न आता होता तो अब तक वह उसका कोई न कोई नाम रख चुका होता।

उस चूहे की कई खासियतें थीं या मूले की धारणा के अनुसार कई पहचानें थीं। उन्हें खासियत कहना मूले की भावना को चोट पहुंचाना होता। पहली बड़ी पहचान यह थी कि वह अपनी बड़ी-बड़ी, उभरी हुई लोहे के छर्रे जैसी आंखें स्थिर किये हुए बैठा रहता था और शिकार करने वाले को लगता था कि उसे झपट कर बड़ी आसानी से मार लिया जा सकता है। लेकिन यहीं मूले ही क्या कोई भी धोखा खा जाता था। अक्सर वह इस कदर बदतमीज साबित होता था कि पीछे भागने के बजाय शिकारी की टांगों के ठीक बीच से होकर भाग खड़ा होता था और इस तरह शिकार करने वाला अपने आपको ठगा गया ही नहीं, बेवकूफ बनाया गया भी महसूस करने लगता था।

दूसरा बड़ा लक्षण था उसका पिछले पैर से थोड़ा-सा लंगड़ाना। और मूले की धारणा हो गयी थी कि वह चूहा जानबूझ कर लोगों को चिढ़ाने के लिए लंगड़ाता था ताकि शिकारी को यकायक तेजी से भाग कर उल्लू बना सके।

इसके अलावा उसका रंग दूसरे चूहों से कुछ ज्यादा ही मखमली था। वह शायद यों भी कि औसत चूहों से वह कद में खासा बड़ा था और उसके दुस्साहस के बारे में यह मशहूर था कि उसने किसी कुत्ते को भी खदेड़ दिया था। एक बार तो मूले के सामने ही एक कुत्ते ने बड़े जोश के साथ